Vol 6 Issue 5 June 2016

ISSN No : 2230-7850

International Multidisciplinary Research Journal

Indian Streams Research Journal

Executive Editor
Ashok Yakkaldevi

Editor-in-Chief
H.N.Jagtap

Welcome to ISRJ

RNI MAHMUL/2011/38595 **ISSN No.2230-7850**

Indian Streams Research Journal is a multidisciplinary research journal, published monthly in English, Hindi & Marathi Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed referred by members of the editorial board.Readers will include investigator in universities, research institutes government and industry with research interest in the general subjects.

Regional Editor

Dr. T. Manichander
Ph.d Research Scholar, Faculty of Education IASE, Osmania University, Hyderabad.

Mr. Dikonda Govardhan Krushanahari
Professor and Researcher ,
Rayat shikshan sanstha's, Rajarshi Chhatrapati Shahu College, Kolhapur.

International Advisory Board

Kamani Perera
Regional Center For Strategic Studies, Sri Lanka

Janaki Sinnasamy
Librarian, University of Malaya

Romona Mihaila
Spiru Haret University, Romania

Delia Serbescu
Spiru Haret University, Bucharest, Romania

Anurag Misra
DBS College, Kanpur

Titus PopPhD, Partium Christian University, Oradea,Romania

Mohammad Hailat
Dept. of Mathematical Sciences, University of South Carolina Aiken

Abdullah Sabbagh
Engineering Studies, Sydney

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Loredana Bosca
Spiru Haret University, Romania

Fabricio Moraes de Almeida
Federal University of Rondonia, Brazil

George - Calin SERITAN
Faculty of Philosophy and Socio-Political Sciences Al. I. Cuza University, Iasi

Hasan Baktir
English Language and Literature Department, Kayseri

Ghayoor Abbas Chotana
Dept of Chemistry, Lahore University of Management Sciences[PK]

Anna Maria Constantinovici
AL. I. Cuza University, Romania

Ilie Pintea,
Spiru Haret University, Romania

Xiaohua Yang
PhD, USA

......More

Editorial Board

Pratap Vyamktrao Naikwade
ASP College Devrukh,Ratnagiri,MS India

R. R. Patil
Head Geology Department Solapur University,Solapur

Rama Bhosale
Prin. and Jt. Director Higher Education, Panvel

Salve R. N.
Department of Sociology, Shivaji University,Kolhapur

Govind P. Shinde
Bharati Vidyapeeth School of Distance Education Center, Navi Mumbai

Chakane Sanjay Dnyaneshwar
Arts, Science & Commerce College, Indapur, Pune

Awadhesh Kumar Shirotriya
Secretary,Play India Play,Meerut(U.P.)

Iresh Swami
Ex - VC. Solapur University, Solapur

N.S. Dhaygude
Ex. Prin. Dayanand College, Solapur

Narendra Kadu
Jt. Director Higher Education, Pune

K. M. Bhandarkar
Praful Patel College of Education, Gondia

Sonal Singh
Vikram University, Ujjain

G. P. Patankar
S. D. M. Degree College, Honavar, Karnataka

Maj. S. Bakhtiar Choudhary
Director,Hyderabad AP India.

S.Parvathi Devi
Ph.D.-University of Allahabad

Sonal Singh,
Vikram University, Ujjain

Rajendra Shendge
Director, B.C.U.D. Solapur University, Solapur

R. R. Yalikar
Director Managment Institute, Solapur

Umesh Rajderkar
Head Humanities & Social Science YCMOU,Nashik

S. R. Pandya
Head Education Dept. Mumbai University, Mumbai

Alka Darshan Shrivastava
Shaskiya Snatkottar Mahavidyalaya, Dhar

Rahul Shriram Sudke
Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore

S.KANNAN
Annamalai University,TN

Satish Kumar Kalhotra
Maulana Azad National Urdu University

Address:-Ashok Yakkaldevi 258/34, Raviwar Peth, Solapur - 413 005 Maharashtra, India
Cell : 9595 359 435, Ph No: 02172372010 Email: ayisrj@yahoo.in Website: www.isrj.org

ISSN: 2230-7850 Impact Factor : 4.1625(UIF) Volume - 6 | Issue - 5 | June - 2016

Indian Streams Research Journal

प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्वशास्त्र "कच्छ की पावन भूमि पर आभीर शासकों का योगदान"

डॉ. प्रो. चन्द्रिकासिंह सी. सोमवंशी
Ph.D., M.R.P./ M.R.P.(UGC), Research Scholar,Reconginsed Ph-D- Guide/
Research Supervisor in Hindi/History/Sociology & Geography,D. Litt. Degree
Completed (A.I.H.C.S.),Adipur (kutch)

Co - Author Details :

डॉ. प्रो. अर्चना पी. उपाध्याय[2] ,
[2]एम.एस.सी, पी.एच. डी. , अध्यक्ष : माइक्रोबायोलाजी विभाग, तोलाणी कॉलेज ऑफ आर्टस एन्ड सायन्स, आदीपुर – कच्छ (गुजरात).

Professor Madhavi Sharma[3]
[3]M.Sc.:M.Phil., B.Ed. Lecture in Chemistry A chipure (kutch), Gujarat.

प्रस्तावना :–

राजपूताना और गुजरात में वहाँ कोई क्षत्रप नहीं था :–

राजपूताने और गुजरात की रियासतों के सम्बन्ध में भी यही कही जा सकती है। समुद्रगुप्त के शिलालेख में पश्चिमी और पूर्वी मालवा के जिन प्रजातन्त्री समाजों की सूची दी है, उनमें आमीरों का नाम पहले आया है। मालव, आर्जुनायन–यौधेय–माद्रक वाले वर्ग में मालवों का नाम सबसे पहले आया है। मालव से माद्रक तक का वर्ग दक्षिण से उत्तर की और आर्थत दक्षिणी रापूताने से एक के बाद एक होता हुआ पंजाब तक पहुँचता है और आभीरोंवाला वर्ग सुराष्ट्र (सौराष्ट्र) से आरम्भ होकर गुजरात तक पहुँचता है। जिसमें मालवों के दक्ष्णि के पास वाला प्रदेश भी सम्मिलित है, और इस वर्ग के देश–पश्चिम से पूर्व की और एक सीधी रेखा में है। पुराणों में आगे चलकर इसके बाद वाले गुप्त साम्राज्य के काल के आरम्भ में सौराष्ट्र–अवन्ती के आभीरों की बतलायी गयी है। वाकाटक युग में काठियावाड या गुजरात में शक शत्रप बिल्कुल रह ही नहीं गये थे। वे लोग वहाँ से निकाल दिये गये थे और पुराणों के अनुसार वे लोग केवल कच्छ और सिन्ध में बचे रहे थे। आभीर का काठियाबाड से निकाले जाने के बाद इन आभीरों का काफी बोलबाला था। प्रजातन्त्री भारत ने, जिससे भारशिव काल में अपने सिवके फिर से बनवाने आरम्भ किये थे। बिना किसी युद्ध के समुद्रगुप्त को सम्राट मान लिया गया था। बातें तो सत्य हो ही चुकी थीं। जब गुप्त सम्राट ने वाकाटक सम्राट का स्थान ग्रहण किया, तब प्रजातन्त्री भारत ने सम्भवतः उसी प्रकार गुप्तों का प्रभुत्व मान लिया, जिस प्रकार उन्होंने वाकाटकों का प्रभुत्व मान लिया था। उन्होंने स्वीकार कर लिया कि गुप्त सम्राट ही भारत के सम्राट हैं।

म्लेच्छ राज्य के प्रान्त :–

सिन्ध–अफगानिस्तान–काश्मीर वाले म्लेच्छों के अधिकार में करीबन चार प्रान्त थे जिनमें गुजरात का कच्छ प्रान्त भी सम्मिलित था। यह हो सकता है कि म्लेच्छों के कुछ अधीनस्थ शासक प्रायः म्लेच्छ ही गवर्नर या भूमृत् थे (म्लेच्छः प्रायाश्च भूमृतः)। कॉती या कच्छ उन दिनों सिन्ध में ही सम्मिलित था। क्योंकि विष्णु–पुराण में उसका अलग उल्लेख नहीं हैं। प्राचीन समय में कच्छ को कॉती के नाम से भी जाना जाता था। कच्छ–सिन्ध उन दिनों पश्चिमी क्षत्रपों के अधिकार में था, जिसके सिक्के हमें उस समय के प्रायः 30 वर्ष बाद तक मिलते है, जबकि कुशाणों ने अधीनता स्वीकार की थी, और कुशाणों के अधीनता स्वीकार करने का समय हम सन 360 ई. के लगभग रख सकते हैं।

शक शासन काल के भारतवर्ष के सम्बन्ध में गर्ग–सहिंता में दिया है। इस विवरण को देखने से ज्ञात होता है कि किसी प्रत्यक्षदर्शी का दिया हुआ है। इस वर्णन में जिन आन्ध्र, शक, पुलिन्द, कुशाण(वैक्ट्रियन) और आभीर आदि राजाओं के नाम आये हैं उनसे विदित होता है कि यह वर्णन के शासनकाल के अन्तिम भाग का है।

दश–यशमेघ यश करने वाले नागों ने, यदि सरल शब्दों में कहा जाय तो नाग सम्राटों ने उन प्रजातन्त्रों का रक्षण और वर्धन किया था जो समस्त पूर्वी और पश्चिमी मालवा में और सम्भवतः गुजरात के आभीर, सारे राजपूताना, यौधेयगण, मालवगण और कदाचित् पूर्वी पंजाब के एक अंश मात्र में फैले हुए थे और ये समस्त प्रदेश गंगा की तराई के पश्चिम में एक ही सम्बद्ध और विस्तृत क्षेत्र में थे। इसके उपरान्त वाकाटकों के समय में जब समुद्रगुप्त ने रगमंच पर प्रवेश किया था, तब से सब प्रजातन्त्र अवश्य ही स्वतन्त्र थे। वाकाटक नरेश 600 ई. में शासन कर कहा था। वाकाटक नरेश हरिषेण ने कुन्तल और अवन्ती सहित लाट देश को अपने अधीन किया था और ये दोनो प्रदेश उपरान्त के दोनों सिरों पर थे। कलिंग, कोसल और आन्ध्र के हाथ में आ जाने से वाकाटक साम्राज्य त्रिकुट और पश्चिमी समुद्र से लेकर पूर्वी समुद्र तक हो गया था। ये सब प्रदेश पहले भी वाकाटक साम्राज्य के अर्न्तगत रह चुके थे। लाट देश वाकाटक राज्य के पडोस में ही था और आभीरों का पुराना निवास स्थान भी था। अवन्ती पुष्यमित्र वर्ग के अधीन रह चुकी थी। नरेन्द्र सेन के समय वह मालव के अर्न्तगत आती थी। प्रवरसेन द्वितीय या प्रभावती गुप्ता के समय कदाचित् को फिर लौटा दिया था। स्कन्दगुप्त ने पुष्यमित्र–युद्ध के उपरान्त ही सौराष्ट्र में अपनी ओर से एक शासक नियुक्त कर दिया था और यदि उस समय तक आभीरों तथा पुष्यमित्रों का पुर्णरूप से लोप नहीं हो गया था, तो उस समय उनका लोप अपश्य ही हो गया होगा, जब वाकाटक नरेश हरिषेग ने लाट देश को अपने अधीन किया था। वाकाटक साम्राज्य में जो लाट देश आ मिला था, उसका कारण यही था कि गुप्तसाम्रज्य का पतन हो गया था। सौराष्ट्र और अवन्ती के आभीर कनक, शूर लोग और अर्वुद के मालव गण यह सभी गुप्त वंश के अधीन नहीं थे। आभीर, शूर, और मालव लोग यद्यपि हिन्दु और द्विज तो थे ही, परन्तु त्रात्यद्विजा भी थे और उनके राष्ट्रीय शासक (जनाधिपाः) बहुत कुछ शूद्रों के समान (शूर प्रायः) थे।

सिन्धु (सिन्धु–नदी के आस–पास का प्रदेश) और चन्द्रभागा, कौती (कच्छ) और काश्मीर ऐसे म्लेच्छों के अधिकार में थे जो अनार्य शूद्र थे अथवा कुछ हस्तलिखित प्रतियों के अनुसार अन्त्याः अथवा सबसे निम्न वर्ग के और वे अछूत थे। ये लोग म्लेच्छ शूद्र थे अर्थात ऐसे म्लेच्छ (शको से मतलब है) थे, जो हिन्दु धर्म के शास्त्रों के अनुसार शूद्रों का पद तो प्राप्त कर चुके थे, परन्तु फिर भी वे म्लेच्छ अर्थात् विदेशी थे। विष्णु–पुराण में सिन्धु तट के उपरान्त दार्षिक देश का भी नाम दिया गया है। इसका अभिप्राय पूर्वी अफगानिस्तान से है जिसमें आज कल दरबेश खेलवाले और दौर लोग निवास करते हैं और जो खैबर के दर्रे से लेकर उसके पश्चिम ओर है। कान अथवा कानन अर्थात् कंग के उदय का समय निश्चित करने में हमें पुराणों से सहायता मिलती है। पहले हमें यह देखना चाहिए कि वह कौन सा समय पुराणों से मिलकर पौराणिक है। पहले हमें यह देखना चाहिए कि वह कौन सा समय पौराणिक उल्लेख का काल था। जबकि पुराण इस अवसर पर गुप्तों उनके समकालीनों का उल्लेख कर रहे थे, यह उनके काल–क्रमिक इतिहास का अन्तिम विभाग है उस समय तक मालव, आभीर, आवंत्या और शूर (यौधेय) लोग साम्राज्य में अन्तर्भुक्त नहीं हुए थे और उन्होंने साम्राज्य की अधीनता नहीं स्वीकृत की थी। मालवों, आर्युनायनों, यौधेयों, माद्रको, आभीरों, प्रार्जुनों, सहसानीकों (सनकादिकों) काकों, खरर्परिकों और अन्य समाजों के प्रजातन्त्र के सम्बन्ध में डॉ. विन्सेन्ट स्मिथ का यह मत था ''की ये सभी प्रजातान्त्रिक गणराज्य समुद्रगुप्त के साम्राज्य की सीमाओं पर अपना विशाल अड्डा जमाये हुए थे। नागर या कर्कोटनागर नामक स्थान जो आज कल के जयपुर राज्य में स्थित है, उन दिनों मालवों का केन्द्र था और वहीं उनकी राजधानी थी जहॉ मालवों के हजारों प्रजातन्त्र सिक्के प्राप्त हुए है। इनके सम्बन्ध में कहा गया है कि वे सिक्के वहॉ उतनी ही अधिकता से पाये गये थे जितनी अधिकता से समुद्रतट पर घोघे पाये जाते है।

डॉ. फ्लीट ने सन 1905 ई. में अपने मत का परित्याग करके आगे लिखा है कि (उच्चकल्प के राजा शर्वनाथ गुप्त सं. 156, 163 और 151 और राजा हस्तिन ने नौगढ रियासत के भूमरा नामक स्थान में सीमा निश्चित करने का एक स्तम्भ स्थापित किया था उसका सम्बत 193, 397 और 214 है)। यह दोनों ही वर्ष गुप्त सम्बत के हैं और इसका कारण उन्होंने यह बतलाया था कि सन 248 वाले सम्बत का बुन्देलखण्ड या बघेलखण्ड में अथवा उसके आस–पास में प्रचार नहीं था और सन 456 या 457 ई.में पश्चिमी भारत में उसका प्रचार था और त्रैकूटक राजा दहसेन ने उसका प्रयोग किया था। डॉ. फ्लींट ने माना है कि इस सम्वत् का प्रचार करने वाला आभीर नरेश ईश्वरसेन हो सकता है जिसने सातवाहन शक्ति पर प्रबल आघात किया था। फ्लीट ने यह भी बतलाया था कि इस सम्वत् का किसी न किसी प्रकार सातवाहनों मे पतन के साथ सम्बन्ध है जो सन् 248 ई. में हुआ था। प्रो. रैप्सन ने इस बात पर जोर दिया था कि आमीरों और त्रैकूटों का सम्बन्ध करना और उन्हें एक ही राजवंश का सिद्ध करना असम्भव है बल्कि यह भी कहा जा सकता है कि वे लोग एक ही जाति के थे, क्योंकि इस बात का कहीं कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता। इसके सिवा आभीर लोग जो पश्चिमी शकों के विरूद्ध उठे थे, उनका समय सन् 248 ई. से बहुत पहले अर्थात ईस्वी सन् 188 से ईस्वी सन् 160 के लगभग था। इसका मतलब यह है कि आभीर लोग सौराष्ट्र काठियावाड और कच्छ की पावन भूमि में 100 ई. या 200 के आसपास शासन कर रहे थे। मारवाड के ठीक उत्तर में यौधयों का राज्य था। उनका विस्तार भरतपुर (जहॉ विजयगढ नामक स्थान में समुद्रगुप्त के समय से भी पहले का एक प्रजातन्त्री शिलालेख पाया गया है) से लेकर सतलज नदी के ठेठ निम्न भाग में बहावलपुर तहसील तक था। जहॉ 'जोहियावार' नाम अब तक यौधेयों से अपना सम्बन्ध सिद्ध करता है। सन् 150 ई. के लगभग रूद्रदामन के समय में भी सबसे बडा गणराज्य था। मालव और यौधेय गणराज्यों के मध्य मके आर्जुनायनों का एक छोटा सा गणराज्य था। आर्जुनायनों के सिक्के राजस्थान के अलवर जिले और उत्तर प्रदेश के आगरा जिले तक मिले है। मद्रक लोग यौधेयों के ठीक उत्तर में रहते थे और उनका विस्तार हिमालय के निम्न भाग तक था। झेलम और रावी के बीच का मैदान ही मद्र देश था और कभी–कभी व्यास नदी तक का प्रदेश भी मद्र देश के अर्न्तगत ही माना जाता था। व्यास और यमुना के मध्य वाले प्रदेश में वाकाटकों के सामन्त सिहंपुर के बर्मन और नागराजा नागदत्त के प्रदेश थे।

विद्वान पाणिनि ने यौधेयों के आयुधजीवी संघ कहा है, जिसका अर्थ है युद्ध करके जीवन निर्वाह करने वाले वे पूर्वी पंजाब में रहने वाला गणतन्त्रीय जाति के थे। उनके बहुत से सिक्के, अभिलेख, मुहरें और पट्टिकाएॅ प्राप्त हुई है। समुद्रगुप्त ने भी उन्हें विजित जातियों में सम्मिलित किया है। जूनागढ़ के नरेश रूद्रदामन ने भी उन्हें एक बीर जाति (वीरशब्दयाति) कहा है। उपयुक्त अभिलेख में रू द्रदामन के राज्य का विस्तार देखते बनता है जिसका राज्य गुजरात के कच्छ जिले तक भी फैला हुआ था। वह एक छत्रधारी शासक था उसके साम्राज्य का विस्तार काफी बडा था। उसके राज्य का विस्तार पूर्वी मालवा, अवन्ति (पश्चिमी मालवा), अनुप, आनर्त (उत्तरी काठियावाड) सौराष्ट्र (दक्षिणी

काठियावाड), स्वाभ्र (साबरमती नदी के आस–पास का प्रदेश), मरू (सम्भवतः मारवाड) कच्छ, सिन्धु (निचली सिन्धु नदी से पश्चिम का प्रदेश), सौवीर (निचली सिन्धु नदी से पूर्व का प्रदेश), कुकुर (उत्तरी काठियावाड), उपरान्त (उत्तरी कोंकण प्रदेश) और निषाद (पश्चिमी विन्ध्य और आरावली की पहाड़ियों का इलाका) सम्मिलित थे। राजा वराह जयवराह काठियावाड में स्थित वर्धमानपुर में राज्य करने वाला चापवंशी राजा धरणिवराह का एक पूर्वज रहा होगा। वर्धमानपुर का समीकरण काठियावाड के झालावाड विभाग में स्थित वधवान या बणनगर के साथ किया गया है समुद्रगुप्त के शिलालेख में प्रजातन्त्रो का जो दूसरा वर्ग है, उसमें आभीर, प्रार्जुन, सनकादिक, काक और खरपरिक लोगों के नाम दिये गये है। समुन्द्रगुप्त से पहले इनमें से कोई भी गणतन्त्रों ने स्वतन्त्र सिक्के नहीं ढलवाये थे। इसका सीधा–सादा कारण यही था कि वे माधाता (महिष्मती) में रहनेवाले पश्चिमी मालवा के वाकाटक, गर्वनर के और पदमावती के नागो के अधीन थे। वास्तव में गणपति नाम धारी का अधीश्वर (धाराधीश) कहलाता था। गणपति को अत्यन्त उग्र स्वभाव का बताया गया है। वह युद्ध प्रिय व परिश्रमी योद्धा था तथा अन्य नाग उससे भय भीत होते थे डरते थे।

हम यह भी जानते है कि सहसानिक (सनकादिक) और काक लोग भिलसा के आस–पास रहते थे। भिलसा से प्रायः 20 मील की दूरी पर आज कल जो काकपुर नामक स्थान है वही प्राचीन काल में काको का निवास स्थान था। सॉची की पहाड़ी काकनाड कहलाती थी जो शायद इन्हीं काकों के नाम पर पड़ा हों। चन्द्रगुप्त द्वितीय के समय एक सहसानिक महाराजा ने, जो कि सहसानिकों का प्रधान नेता था उदयगिरी की चट्टानों पर चन्द्रगुप्त–मन्दिर बनवाया था। भागवत पुराण में कहा गया है कि आभीर लोग सौराष्ट्र और आनर्त (गुजरात) के शासक थे (सौराष्ट्र आवन्त्य आभीराः) थे, तथा विष्णुपुराण में भी कहा गया है कि आभीरों का निवास स्थान सौराष्ट्र और अवन्ती प्रदेशों तक फैला हुआ था। वाकाटक राजवंश के इतिहास से मालूम पडता है कि पश्चिमी मालवा में पुष्यमित्र लोग थे और आगे चलकर हम देखते है कि अनेक स्थान पर मैत्रक लोग आ गये थे, जिनमें गणतन्त्री शासन व्यवस्था प्रचलित था। पेरिप्लज के समय में आभीर लोग गुजरात में रहते थे तथा डा. स्मिथ ने आभीरों का स्थान बुन्देलखण्ड में निश्चित किया है। मगर हम डा. स्मिथ के विचार से सहमत नहीं है। उनके किसी एक घराने के राज्य छिट–पुट रूप में चाहे ही बुन्देलखण्ड में रहा हो, लेकिन आभीरों के राज्यों का विस्तार सम्पूर्ण सौराष्ट्र एवं गुजरात कच्छ तक फैला हुआ था। कच्छ की पावन–बेला में शक्तिशाली आभीर शासकों ने अपने बिशाल साम्राज्य को फैलाया और कच्छ की पावन–बेला में शक्तिशाली आभीर शासकों ने अपने बिशाल साम्राज्य को फैलाया और कच्छ के इतिहास में उनका एक अलग ही महत्व एवं योगदान है। आभीरों से आरम्भ होने वाला और खरपरिकों से समाप्त होने वाला यह वर्ग काठियावाड और गुजरात से आरम्भ होकर दमोह तक अर्थात् मालवा प्रजातन्त्र के नीचे और वाकाटक राज्य के ऊपर एक सीधी रेखा में था। मेरे मतानुसार डॉ. स्मिथ के विचार न्याय संगत नहीं हो सकते। डॉ. विन्सेन्ट स्मिथ को यह भ्रम हो गया था कि काठियावाड और गुजरात पर उन दिनों पश्चिमी क्षत्रप राज्य करते थे। पुराणों तथा समुद्रगुप्त के शिलालेखों से भी यह बात सिद्ध होता है कि काठियावाड अथवा गुजरात में क्षत्रपों का राज्य नहीं था। काठियावाड पर से पश्चिमी क्षत्रपों का अधिकार नागवंश और वाकाटक वंश काल में ही दिया गया था।

सौराष्ट्र और अवन्ती के आभीर और अरावली के शूर तथा मालव लोग एक स्वतंत्र गणराज्य के रूप में विख्यात थे। उनके शासक 'जनधिपः' कहे गये है। जिसका अर्थ होता है जन या जनता के अर्थात गणतन्त्रात्मक (प्रजातन्त्र) शासक। भागवत पुराण में मद्रकों का उल्लेख नहीं है। ऐसा मालूम पड़ता है कि आर्यावर्त युद्धों के परिणाम स्वरूप मद्रक लोग समुद्रगुप्त के साम्राज्य में सम्मिलित हो गये थे। जब गणतन्त्रों के सम्राट (अधीश्वर) गुप्तों से परास्त हो गये तो सबसे पहले मद्रक लोग ही उनके साम्राज्य में मिल गये और पहले मद्रकों ने ही गुप्त सम्राट की अधीनता स्वीकार कर ली थी। भागवतपुराण में उल्लिखित शूर वही प्रसिद्ध यौधेय गण है। शूर शब्द जिसका अर्थ बीर होता है। यौधेय लोग भी पहले पंजाब में रहते थे। यौधेय गणों एवं मालव गणों को हमें धन्यवाद देना चाहिए क्योंकि उन्होंने ही सिन्ध की पश्चिमी सीमा पर और इधर मथुरा की तरफ पूर्वी सीमा पर भी कुशाण शक्ति को परास्त करके आगे बढने से रोका था। डो. आर. सी. मजुमदार व डॉ. के.एम. मुन्शी आदि ने यौधेयों को पाण्डव युधिष्ठिर की सन्तान माना है। लेकिन पण्डित भगवद्दत्त जी, बी.ए, रिसर्च स्कोलर, ने इन यौधेयों को पाण्डव धर्मराज युद्धिष्ठिर की सन्तानों में होना बतलाया है। मालव, यौधेय, आर्जुनायन, औदुम्बर, कुणिन्द आदि स्वायत जातियों ने चॉदी और तॉबे के काफी बड़ी मात्रा में सिक्के चलाये। इनके सिक्कों पर ''यौधेय गणस्य जय लेख'' अंकित है। भागवतपुराण में यौधेयों को आभीरों के उपरान्त और मालवों से पहले रखा है अर्थात् उन्हें इन दोनों के बीच स्थान दिया है और इससे यह सूचित होता है कि वे आभीरों के उत्तर में और मालवों के उत्तर–पश्चिम में अर्थात राजपूताने के पश्चिमी भाग में रहते थे। विष्णुपुराण में लिखा हुआ है कि सुराष्ट्र–अवंती–शुराद् अर्वुद्–मरू भूमि–विष्द्राश्च, त्रात्या, द्विज्य, आभीर शूद्रा (इसे 'शूर' समझना चाहिए) आधा, भोक्ष्वन्ति। इसकी पुष्टि शूर और शूद्र विष्णपुराण और हरिवंशपराण से भी होता है। शौद्रायणों का भी एक गणतन्त्र (प्रजातन्त्र) था और यह शोद्रायण शब्द शुद्र शब्द से ही निकला है। परन्तु यहा शूद्र से शूद्रो को जाति का अभिप्राय नहीं है बल्कि शुद्र नामक एक व्यक्ति था, जिसने शोद्रयणों का प्रजातन्त्र राज्य स्थापित किया था। शूर शब्द मूलतः यौधयों के लिए ही प्रयुक्त हुआ है। भागवतपुराण और विष्णु–पुराण में प्रर्जुनों, सहसानिको, काको और खर्परों का कोई उल्लेख नहीं है। ये सब नाग वर्ग के थे और पूर्वी मालवा में रहते थे। कभी–कभी पुराणों के मत भी गलत हो सकते है। यौधेय, प्रार्जुन तथा शूर, यौधय एवं आर्जुनायन आदि गण लोग शुद्ध पाण्डववंशी क्षत्रिय थे। यह विख्यात रहा है कि पाण्डव सोमवंशी क्षत्रिय थे।

महाभारत से पता चलता है कि काकतीय उन दिनो आभीरों का स्थान कच्छ – गुजरात और उसके उपरान्त के बीच में था। यह प्रान्त वाकाटक साम्राज्य में से लेकर बनाया गया था औा इसका शासक कोई माणिधान्यक था जो माणिधान्य के पुत्र या वंशज था। कदाचित आपस का मन–मुटाव मिट जाने पर यह प्रदेश पृथ्वीषेण को दे दिया गया था, क्योंकि पृथ्वीषेण ने कुन्तल के राज्य पर विजय प्राप्त की थी और कुन्तल के राजा के साथ उसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध होने के लिए यह आवश्यक था कि पृथ्वीषेण ही इस प्रान्त का शासक होता है। भागवत पुराण के अनुसार म्लेच्छ राज्य बाद वाला राज्य है। पहले यह कुशाण राज्य था। यहॉ समुद्रगुप्त के शिलालेख के लिए पुराण मानों भाष्य का काम देते हैं। यथा –

सिन्धोस्तंट चन्द्रमभागां
कौन्ती (कच्छ) काश्मीर मण्डलम्
भोक्ष्यन्ति शुद्राश्च आन्प्याधा (अथवा त्रात्वाधा)

म्लेच्छाश्च आब्रह्मवर्चसः। (Purana Text i`-55)

अर्थात् सिन्धु के तट पर और चन्द्रभागा के तट पर कौती (कच्छ) और काश्मीर मण्डल में वे म्लेच्छ लोग शासन करेंगे जो क्षुद्रों में सबसे निम्न कोटि के और वैदिक के विरोधी हैं। भागवत में सिन्धु–चन्द्रभागा–कॉती यानी कच्छ–काश्मीर के म्लेच्छों के सम्बन्ध में यही वर्णन मिलता है और उसमें अध्याय अध्यान–2 खण्ड–12 के अन्त तक वहीं सब ब्यौरे की बातें कही गयी है। दूसरे पुराणों में जिन्हें यवन कहा गया है उन्हें विष्णुपुराण और भागवत पुराण में म्लेच्छ कहा गया है जिन यवनों का वर्णन है, वे वही यौन अर्थात् यौवा या यौवन य फिर यवन शासक हैं जिनके सम्बन्ध में सिद्ध हो चुका है कि वे ही कुशान (कुषण) थे। यह वर्णन यौन शासन का है और उस यवनों का नहीं है जो इण्डो–ग्रीक कहलाते है। यह ''यौन'' शब्द ही आगे चल ''यवन (तुषार)'' हो गया। यौव अथवा यौवा उन दिनों कुशणों की राजकीय उपाधि थी और पुराणों में कुशानों को तुखार–भुरूंड और शक कहा गया है। सिन्ध अफगानिस्तान–काश्मीर वाले म्लेच्छों के अधिकार में करीब चार प्रान्त थे जिनमें कच्छ भी सम्मिलित था। यह हो सकता है कि म्लेच्छों के कुछ अधीनस्थ शासक ऐसे भी हों जो म्लेच्छ न रहे हो, जैसा कि भागवतपुराण में कहा गया है कि प्रायः म्लेच्छ ही गर्वनर या भूभृत थे (म्लेच्छप्रायाश्च भूभृतः) कौंति या कच्छ उन दिनों सिन्ध में ही सम्मिलित था, क्योंकि विष्णुपुराण में उसका अलग से उल्लेख नहीं है। कच्छ सिन्धु उन दिनों पश्चिमी क्षत्रपों के अधिकार क्षेत्र में था, क्योंकि सिक्के हमें उस समय के प्रायः तीस वर्ष बाद मिलते हैं, जब कि कुशानों (कुषाणों) ने अधीनता स्वीकृत की थी, और कुशानों की अधीनता स्वीकृत करने का समय हम सन् 350 ई. के लगभग रख सकते हैं। पुराणों में उन्ही राजवंशों के वर्ष तथा क्रम दिये गये हैं जो अगले पौराणिक युग अर्थात वाकाटकों (बिन्ध्य शासको) के समय तक चले आ रहे थे। इस सम्बन्ध में मूल पाठ देखने लायक है– मत्स्यपुराण–आंदाणाम् संस्थिता राज्ये तेवां भृत्यान्वय नृपाः सप्तैव आंध्रा भविष्यनित दश आभीरस्तथ्नृपा।। (271, 17, 18)

विष्णुपुराण–आंधभृत्याः सम–आभीराः।

अर्थात् उनमें यहीं कहा गया है कि आंध्रों के आधीन आभीरों और अधीनस्थ आन्ध्रों के राजवंश थे। मत्स्यपुराण के अनुसार अभीरों की दस पीढ़ियॉ ही बतलाई गयी हैं। उस समय के सातवाहनों के समय में इन आभीरों ने उस ईश्वरसेन की अधीनता में एक राज्य स्थापित किया था, जिसका शिलालेख हमें नासिक से मिलता है। यद्यपि आभीरों की दस या फिर सात ही पीढियों का उल्लेख है पुराणों में, तो भी उनका शासनकाल 67 वर्ष था। नासिक शिलालेख से दो बातों की जानकारी मिलती है (1) जिस ईश्वरसेन को राजा कहा गया है तथा जिसके शासनकाल के नवेवर्ष में यह शिलालेख को उत्कीर्ण किया गया था, वह किसी राजा का लड़का नहीं था, बल्कि उसका पिता शिवदत्त एक सामान्य आभीर था। (2) और जिस महिला ने यह दान किया था सभी तरह के रोगी साधुओ की चिकित्सा आदि के लिए कुछ पंचायती संघोके पास धन जमा कर दिया था, उसने अपने आपको ''गणपक विश्यवर्क्मन् की माता'' और ''गणपत रेमिल की पत्नी'' कहा है जिससे यह सूचित होता है कि उसके सम्बन्ध किसी गणतन्त्र (प्रजातन्त्र) के प्रधान नेता से था। जिन आभीरों का साम्राज्य भोगी सातवाहनों के समय में उदय हुआ था, उससे जान पडता है कि उनका एक गण था, और उसमें ईश्वरसेन ऐसा प्रथम व्यक्ति हुआ था जिसने राजा (राजन्) की उपाधि धारण की थी। उसके सम्बन्ध में यह विश्वास किया जाता है कि उसने सन् 236 और 239 ई. के बीच में शक क्षत्रप को अधिकार से वंचित करके निकाल दिया था। मत्स्यपुराण में स्पष्ट कहा गया है कि विध्यशक्ति के पहले अर्थात् सन् 248 ई. के लगभग आभीरों का अन्त हो गया था।

ऐसा जान पडता है कि जिस समय ईश्वरसेन का उदय हुआ था, उसी समय से पुराण यह मान लेते है कि आभीरों का गण था प्रजातन्त्री और अधीनता का काल समाप्त हो गया था। यदि 67 वर्ष के अन्दर ही दस अथवा सात आदमी बारी–बारी से शासन के उत्तराधिकारी हो तो इसका अर्थ सिर्फ यही हो सकता है कि उनमें गणतन्त्र या प्रजातन्त्र प्रचलित था और उसमें उसी तरह उत्तराधिकारियों या शासकों की पीढियॉ होती थी, जैसी पुष्यमित्रों तथा इसी प्रकार के दूसरे मित्रों में हुआ करती थी जिनका उल्लेख पुराणों में है और प्रत्येक अधिकारी का शासन–काल इसी प्रकार अल्प हुआ करता था। जिस समय समुद्रगुप्त के शासन का क्षेत्र आता है, उस समय हम फिर आभीरों को गणतन्त्री या प्रजातन्त्री समाज के रूप में पाते है। ईश्वरसेन ने कदाचित् आभीर संघटन बदल डाला था और एक राजवंश स्थापित करने का प्रयत्न किया था। नासिक वाले शिलालेख में इस बात का उल्लेख है कि स्वयं ईश्वरसेन के समय में ही गणतन्त्रों का अस्तित्व था, अर्थात् गणतन्त्र या प्रजातन्त्र प्रचलित था और उसका प्रधान गणापक या गणनायक कहलाता था। यद्यमि अधिकतर संभावना तो इस बात की जान पडती है कि वह गणतन्त्री राजा हो। जो हो, परन्तु यह बात अवश्य निश्चित है कि उसके समय में आभीरों ने एक राजनीतिक समाज के रूप में सातवाहन राजवंश की अधीनता सहना छोड दिया था। ईश्वरसेन के 67 वर्ष पहले सातवाहनों ने जो आभीर गणतन्त्र को मान्य किया था, सका समय 160 ई. के आस–पास हो सकता है। ''रूद्रदामन को गणतन्त्री यौधयों एवं मालवों ने तंग कर रखा था और जान पड़ता है कि सातवाहनों में आभीरों को बीच में इसलिए रख छोड़ा था कि यौधयों और जान पड़ता है कि सातवाहनों में आभीरों को बीच में इसलिए रख छोड़ा था कि यौधयों और मालवों के साथ विशेष संघर्ष की संभावना न रह जाय और आभीर लोग बीच मे रह कर दोनो पक्षों का संघर्ष बचावें।''

सतवाहनों ने देखा होगा कि अपने पडोसी क्षत्रप के राज्य से ठीक सटा हुआ एक गणतन्त्र रखने में कई लाभ हैं। पुराणों में आभीर शासकों की संख्या के सम्बन्ध में कुछ गड़बड़ी है, कहीं वे 10 कहे गये है और कहीं 7 और संख्या भी दी गयी है अर्थात् कहा गया है कि गर्दभिलों में 10 और आभीरों में 7 शासक हुए थे और दूसरे पुराणों में कहा गया है कि आभीरों में 10 और गर्दभिलों में 7 शासक हुए थे। कुछ भी हो 10 शासक हुए। कौटिल्य अर्थात् चाणक्य ब्राह्मण के समय में काठिसयावाड में सौराष्ट्र का गणतन्त्र था। जान पड़ता है कि आभीर और सौराष्ट्री लोग यादवों और अन्धक वृष्टियों के ही संगी–साथी और रिश्तेदार थे। जिस समय विन्ध्यशक्ति का उदय हुआ था, उसी समय इक्ष्वाकु वंश का अन्त हुआ था। सातवाहनों ने जिस समय चुटुओं और आभीरों की स्थापना की थी, लगभग उसी समय इक्ष्वाकुओं की भी स्थापना की थी। चटु और आभीर लोग तो पश्चिम की रक्षा करते थे और इक्ष्वाकु लोग की और नियुक्त किये गये थे। गणतन्त्री समाजों की

सामाजिक व्यवस्था समानता के सिद्धान्त पर आश्रित थी। उनमें जाति–पाति का कोई बखेड़ा नहीं था। वे सब लोग एक ही जाति के थे। इसके विपरीत सनातनी सामाजिक व्यवस्था असामनता और जाति भेद पर आश्रित थी और इसलिए जिस प्रकार मालवों, यौधेयों, मद्रकों, आभीरों और लिच्छिवियों, शूरो में, बच्चा–बच्चा देश भक्त होता था। उसी प्रकार सनातनी सामाजिक व्यवसाय में समाज का हर आदमी कभी देश भक्त हो ही नहीं सकता था। उक्त गणतन्त्री समाज में मानों ऐसे अखाड़े थे जिनमें लोग राज्य स्थापना देशहितैषिता, व्यक्तिगत उच्चमहत्वाकांक्षा योग्यता और नेतृत्व की बहुत अच्छी शिक्षा पाते और अभ्यास करते थें। परन्तु समुद्रगुप्त और उसके उत्तराधिकारियों की अधीनता में वे सब लोग मिलकर एक संगठित राज्यश्रित और सनातनी वर्णव्यवस्था में लीन हो गये थे। जिनमें एक क्षत्र शासन प्रणाली और साम्राज्यवाद की ही मान्यता थी और उन्हीं की ही बुद्धि हो सकती थी। लिपि की दृष्टि से यदि देखा जाय तो मयूर शर्म्मन् का चन्द्रबल्ली शिलालेख जिसमें की पल्लवों और आभीरों का उल्लेख है ईस्वी सन् 300 के आस–पास का ही यह शिलालेख होगा। डॉ. कृष्ण ने इस शिलालेख का समय 250 ई. निश्चित किया है। यह नया मिला हुआ शिलालेख चीतलदुर्ग के किले के पास चन्द्रबल्ली नामक स्थान में एक झील के किनारे उसके बॉध पर खुदा हुआ है जो तीन संक्षिप्त पंक्तियों में है। पश्चिमी क्षत्रपों में रूद्रसेन काफी योग्य शासक सिद्ध हुआ। उसका शासन काल 200 ई. से 222 ई. तक 22 वर्षो तक चलता रहा। उसके दो भाई संघदामा और दामसेन तथा उनके दो पुत्रों में पृथ्वीसेन तथा दामजय दो लड़के थे। पश्चिमी भारत के शक शासक रूद्रसिंह प्रथम भी अन्याय से प्राप्त राज्य सुख बहुत देर तक न भोग सका इसके बाद एक दूसरा आभीर सेनापति ईश्वरदत्त आया, जिसने नासिक में अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया था। रूद्रसिंह को राज्यस से बाहर निकाल कर सन् 188 ई. में स्वंय महाक्षत्रप बन बैठा। रूद्रसिंह ने कोई चारा न देखकर ईश्वरदत्त की अधीनता मान ली, तथा एक क्षत्रप के रूप में शासन करना स्वीकार किया। इस अवस्था का लाभ उठा कर उसने अपनी शक्ति और प्रभाव बढा लिया और लगभग दो ही वर्षो में आभीर नरेश जो कि पहले रूद्रसिंह का सेनापति था, निकाल बाहर किया। ईश्वरदत्तकी प्रमुखता में आभीरों के हस्तक्षेप की घटना श्री रैप्सन महादेव के अनुसार 236 से 238 ई. हुई होगी, इस अवधि में पश्चिमी क्षत्रपों ने कोई सिक्के जारी नहीं किये। किन्तु क्योंकि आभीर लगभग 180 ई. में क्षत्रपों के अधीन सेनापति के रूप में कार्य करते थे, इसलिए जैसा डॉ. दे.रा. भण्डारकर का मानना है अधिक सम्भावना तो यह है कि 178 ई. से 180 ई. में रूद्रसिंह प्रथम का पतन ईश्वरदत्त की नायकता से आभीरों के चोट से हुआ हो गा। लेकिन श्री रैप्सन अपने मत की पुष्टी में कहता है कि रूद्रसिंह का पतन आभीर नरेश ईश्वरदत्त द्वारा न होकर, उसके भतीजे जीवदामा के पुनः शक्ति सम्पन्न हो जाने के कारण से ही हुआ हो गा।

रूद्रसेन के शासन काल में उसकी राजकीय परिस्थितियॉ उसके अनुकूल न थी। रूद्रसेन प्रथम के शासन काल में मालवा, काठियावाड (रूद्रसिंह प्रथम के बहुत से सिक्के काठियावाड से प्राप्त हुए हैं) और पश्चिमी रापूताना पश्चिमी क्षत्रपों की आधीनता में जकड़े रहे। सिन्ध के विषय में तो निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता कि वह भी इसके शासन में था कि नहीं। उत्तरी कोंकड सातबाहनों के अधिकार क्षेत्र में आ गया था। उसके थोड़े ही समय के बाद वहीं पर आभीरों का एक छोटा सा राज्य उठ खडा हुआ। प्रारम्भ में यह अवश्य अपने आपकों सातबहनों का सामन्त कहते रहे होंगे, लेकिन बाद में इन आभीरों ने अपनी स्वतन्त्र सत्ता प्राप्त कर ली। ये तीसरी शती में उत्तरी कोंकड और महाराष्ट्रके शासन रहे। पुराणों में लिखा है कि सातबाहनों के पतन के बाद दस आभीर राजा 67 वर्षो तक शासन करते होंगे। आभीरों के राज्यकाल का निर्देशक ठीक से नहीं मालूम होता, क्योंकि एक आभीर राजाने सासानी सम्राट नहसेह को 293 ई. में राजसिंहासन के लिए हुए एक लडाई में सफलता पाने पर एक दूतमण्डल भेजकर बधाई दी थी। इस वंश के शासकों के नाम अथवा उनके कार्यो के सम्बन्ध में जानकारियॉ बहुत ही कम उपलब्ध हैं।

दामसेन के शासन में पश्चिमी क्षत्रपों का राज्य मालवा, गुजरात और काठियावाड–कच्छ तक सीमित रहा। उज्जयिनी अब भी उसकी राजधानी बनी रही। ऐसा जान पडता है कि जीवदामा की मृत्यु उसके पिता दामजद प्रथम की मृत्यु से पूर्व ही हो गई थी, क्योंकि उसके बाद 238 ई में उसका छोटा भाई यशोदामा पिता का उत्तराधिकारी बना जो एक बडा महाक्षत्रप कहलाया। लगभग 230 ई. से 275 ई. के क्षत्रप इतिहास के सम्बन्ध में मूल उपादान मौन धारण किये हुए है। पश्चिमी क्षत्रपों के सोने के सिक्के, जो केवल मालवा में प्रचलित थे, 240 ई. से एकाएक मिलने बन्द हो जाते हैं। वाकाटक राज्य के संस्थापक विन्ध्यशक्ति ने लगभग 255 ई. से 275 ई. तक प्रायः बीस वर्षो तक राज्य में मिला लिया था। श्रीधरवर्मा नामक एक नया शक सामन्त सम्भवतः लगभग 266 ई. से भोपाल के समीप सॉची में एक स्वतन्त्र राजा के रूप में शासन कर रहा था। मालवा के हाथ से निकाल जाने के बाद क्षत्रप राज्य की राजधानी उज्जयिनी की जगह अवश्य ही काठियाबाड में गिरिनगर (जूनागढ़) हो गयी होगी। तीसरी सती के उत्तरार्ध में सातबाहनों के पतन के बाद क्षत्रपों ने महाराष्ट्र को अपने अधीन कर लिया था। यह असंगत सा मालूम पडता है पुराणों और अभिलेखों के प्रमाणों से विदित होता है कि तिसरी शती में महाराष्ट्र में आभीर शक्तिशाली हो गये थे। डॉ. काशीप्रसाद जायसवाल के अनुसार समुद्रगुप्त के पश्चिमी क्षत्रपों पर आक्रमण किया। पूर्वी मालवा के काक और सनकानिक (सनकादिक) गुप्तों के पडोसी थे। यह सम्भव नहीं कि उसने उनके भी पश्चिममें जाकर गुजरात–कच्छ और काठियावाड के क्षत्रप राज्य पर आक्रमण किया हो। प्रयाग प्रशस्ति जो समुद्रगुप्त का है उसमें उल्लेख है कि पश्चिमी शकों को करारी हार दिया और मुँह की खानी पडी। समकालिक सारनी सम्राट शापुर द्वितीय ने 356–357 ई. में पूर्व की तरफ अभियान किया था, यह निश्चित है। वह 357 ई. में पन्जाब के राजा किदार को जितने के बाद, सिन्ध को आधार बना कर वह काठियावाड की तरफ मुडा हो। लेकिन उसके सिक्के काठियावाड में मिलते नहीं है। ''गुप्त सम्राट चन्द्रगुप्त द्वितीय ने गुजरात और काठियावाड को अपने साम्राज्य में मिला लिया था, जिसमें कि सम्पूर्ण कच्छ की पावन भूमी भी सम्मिलित थी। उसने शकों का सदा के लिए नाश कर दिया।''

मालव, आर्जुनायनों, यौधेयों एवं मद्रकों का एक गुट था। मालव पन्जाब से जहॉ निचली रावी के तटों पर वे सिकन्दर महान से लडे थे। वहॉ से वे प्रवास कर पश्चिम भारत के कई भागों में जा बसे। ''यौधेय उस प्रदेश में बसते थे जो कि बहावलपुर राज्स की सीमा पर सतलज के दोनों किनारों पर आज भी ''जोहियार'' के नाम से प्रसिद्ध हैं। जोहिया राजपूर इन्ही यौधयों की ही सन्तान हैं। किन्तु यौधेयों का राज्य एक समय उत्तर में कांगडा से पूर्व में 'सहारनपुर' और दक्षिण में 'भरतपुर' तक फैला था।'' आर्जुनायनों के प्रदेश के विषय में निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता की वह कहॉ राज्य करते थे। किन्तु अभिलेख में मालवार्जुनायान यौधेय मद्रक यदि भौगोलिक रूप में उल्लखित है, जैसा प्रायः विश्वास किया जाता है तो आर्जुनायनों का राज्य भरतपुर और पूर्वी राजस्थान के बीच कहीं जयपुर के आस–पास में रखा जा सकता है। मद्रकों को रावी और चिनाव के मध्यवर्ती आज कल के स्थालकोट के आस–पास के प्रदेश में रखा जा सकता है। यह स्थालकोट सम्भवतः

शाकल को सूचित करती है जहाँ उनकी प्राचीन राजधानी थी।

आभीरों, प्रार्जुन, सनकानिक, काक और खरपरिकों इन पॉच गणतन्त्रों की स्थिति का सही मायना देना कठिन है। आभीरों का दल शक्तिशाली रूप में था, जो मूलतः पश्चिमी राजस्थान जिसे पेरीप्लस में अबिस्यि (शायद आबिसीनिया) कहा गया है, में बसते थे। ''पश्चिमी भारत के गुजरात के कच्छ जिले की भूमि में आभीरों का गढ़ था। आभीरों के लेख–लेखनी राजस्थान, महाराष्ट्र और गुजरात के काठियावाड़ और कच्छ में भी मिलते है। उनकी एक तीसरी बस्ती मध्य प्रदेश में भी जिसे उनके नाम पर आज भी 'अहीरवाडा' का ही एक रूप हो।'' यह स्थान विदिशा और झॉसी के बीच में हैं। सनकानिकों के एक सामन्ती शासक ने चन्द्रगुप्त द्वितीय काल में भिलसा से लगभग 2 किलोमीटर दूर उत्तर–पश्चित में स्थित उदयगिरी पहाडी के वैष्णव–गुहा–मन्दिर में एक दानपत्र लेख अंकित कराया था जो अभिलेख संख्या 6 के अर्न्तगत आ जाता है। सनकानिक भिलसा के आसपास में रहते रहें हों गे। भिलसा से 20 मील के उत्तर की तरफ एक गॉव काकपुर है जिसका अभिज्ञान काकों की प्राचीन राजधानी से किया गया है। खरपरिकों को मध्यप्रदेश के 'दमोह जिले' में रखा जा सकता है। प्रार्जुनों का भिलसा के उत्तर और पूरब के प्रदेशों में राज्य करते थे। वाकाटक राज्य के सम्बध में डॉ. बी.ए.स्मिथ ने ठीक ही लिखा है कि उसके राज्य की भौगोलिक स्थिति ऐसी थी कि वह गुजरात तथा (सौराष्ट्र–कच्छ) के शक क्षत्रपों के प्रदेशों पर धावा बोलने वाली उत्तरी शक्ति को पर्याप्त हानि पहुचा सकता था। पश्चिम भारत के शक क्षत्रपों ने अपने पुराने मुद्रा प्रकार को जारी रखा। इस युग में दो क्रान्तियॉ हुई। एक 304 ई. में और इसके 40 वर्ष बाद यानि 344 ई. में। इससे प्रतिद्वन्दी शक गद्दी पर बैठे। किन्तु उन्होंने चालू मुद्रा प्रकार में कोई परिवर्तन नहीं किया। आभीर शासक ईश्वरदत्तने लगभग दो वर्ष तक क्षत्रप राज्य पर स्थायी अधिकार किया। क्षत्रप सिक्कों पर उल्टी और त्रिकूट पहाड़ी है जिस पर दूज का चन्द्रमा है। कुछ समय बीतने के बाद केन्द्र की पहाड़ी बाकी दो से बड़ी होने लगी, शेष दोनों बिलकुल नाममात्र रह गयी। पश्चिमी क्षत्रपों के चॉदी के सिक्कों की औसत तौल लगम 35 ग्रेन है और गुप्तों और हुणों के चॉदी के सिक्के क्षत्रपों के नमूने पर आधारित है। इनका तौल–मान भी वही है। इन चॉदी के सिक्कों की त्रिशक्ति 1930 ई. में दो रूपये के बराबर थी। कुछ क्षपत्र शासकों ने ताम्र–मुद्रऍ भी चलाई थी, किन्तु प्रायः इन पर राजा का कोई नाम नहीं है। सामान्यतः इन पर सीधी ओर 'हाथी' है और उल्टी तरफ 'त्रिकूट पहाड़ी' जिसके एक और 'सूर्य' तथा दूसरी और 'चन्द्रमा' है।

गुजरात राज्य का वर्तमान भडौच का क्षेत्र भरू कच्छ अर्थात भृगुकच्छ जनपद कहलाता था। यहॅा का शासक महाभारत का घटोत्कच का नाना अर्थात् हिडिम्बा का पिता तान्डी था। सम्पूर्ण कच्छ भी इसके अर्न्तगत आ जाता था। भरू कच्छ राजा युधिष्ठिर के राजसुय यदा के लिए बलि लाया था। इस सम्पूर्ण क्षेत्र होने के कारण भृगु–कच्छ भी कहा गया है। सम्भवतः ऋषि भृगु या उनके वंशजो का क्षेत्र होने के कारण भृगु–कच्छ नाम पड़ा होगा। कपिलमुनि के नाम पर कपिल आश्रम कच्छ के केरा गॉव (गाम) में है। काफी ऋषि महात्मा कच्छ में पतस्या करते थे इसी तपस्या करने के नाम पर एक 'टपकेश्वरी' अर्थात् प्राचीन नाम 'तपेश्वरी' अर्थात 'तपकेश्वरी' पड़ा। क्योंकि कच्छ एक जंगली एवं रण प्रदेश भी था। महाभारत से मालूम पड़ता है कि आभीर सरस्वती नदी के किनारे निवास करते थे। पाण्डव नकुल ने इनको अपने अधीन किया था। अभीरों की पाण्डवों से लडाई हुई थी।

कच्छ के गौरवमय प्राचीन पृष्ठ भूमि में गणतन्त्रीय आभीरों का अपनी एक अलग ही भूमिका रही है, अगर यौधेय गणों का राज्य उत्तर–पूर्व में बहावलपुर राज्य की सीमा पर 'सतलज' के आस–पास और कांगडा से पूर्व में 'सहारनपुर' और दक्षिण में 'भरतपुर' तक फैला था, तो आभीरों का स्वर्णीम राज्य पश्चिमी राजस्थान के अबिरिया (पेरीप्लस) और महाराष्ट्र एवं मध्य प्रदेश में 'विदिसा' और 'झॉसी' के बीच में स्थित 'अहीरवाडा' में था तथा पश्चिमी भारत के कच्छ में तो इन गणतन्त्रीय कहे जाने वाले आभीरों के साम्राज्य का गढ था। आभीरों ने कच्छ की पावन–भूमि में जमकर कई सौ वर्षो तक राज्य किया।

''दुर्भाग्यवंश आभीर युग यानि गणतन्त्रीय शासकों की लौकिक इमारते सुरक्षित नहीं रहीं, किन्तु आरम्भिक शासकों के प्रासादों की कुछ कल्पना कच्छ के आभीरों के शासन में और आभीर शासक ईश्वरदत्त के शासनकाल में देखने को मिलती है। आभीर शासक गुजरात के प्राचीन इतिहासमें सोलंकी कालीन 'स्वर्णिम युग' में अपनी एक अलग ही पहचान बना रखा है।''

शक क्षत्रप नहपान के नासिक गुहालेख में प्रभास (काठियावाड), भरूकच्छ (भरौच), दशपुर (मालवा), गोवर्धन (नासिक) तथा शेपारिक (सोपारा) के नाम उल्लखित हैं, क्योंकि इन स्थानों पर ऋषभदत्त के आराम गृह का निर्माण किया था। रूद्रदामा के जूनागढ अभिलेख में तो अनेक प्रान्तों के नाम मिलते है – आकरावती (मालवा), सुराष्ट्र (सौराष्ट्र), मरू (राजपूताना), सिन्धुसौबीर (सिन्धु नदी का निचला प्रदेश) और कच्छ–आर्नर्त (उत्तरी काठियावाड) आदि का विवरण आता है। ''इसका मतलब यह है कि रूद्रदामन का शासन क्षेत्र का इलाका कच्छ की भूमी तक भी विस्तृत था। उसका साम्राज्य काफी विशाल रहा होगा। आभीरों को भी छत्तीस क्षत्रिय राजकुलों में स्थान प्राप्त है। महाभारत में इनका स्थान सरस्वती नदी के किनारे स्थान पर माना गया है। एक लम्बे समय से आभीरों एवं यादवों में संघर्ष चलता आ रहा था। अतः श्रीकृष्ण के मृत्यु के बाद और द्वारिकापुरी के समुद्र में डुब (समा) जाने के बाद जब अर्जुन, यादव स्त्रियों को ले जा रहा था तो रास्ते में उन्हे इन आभीरों मे लूटा था।'' पन्तजलि ने अपने महाभाष्य में इन आभीरों का उल्लेख किया है। (शक राजा रूद्रसेन के 103 वें वर्ष वि. 238) के शिलालेख से ज्ञात होता है कि वैशाख–पक्ष की धन्य–तिथि–पन्चमी को राहिणी–नक्षत्र–मयरात्रि में सेनापति वाप्पक के पुत्र रूद्रभूति आभीर ने सब प्राणियों के हित और सुखके लिए रसोप्रदक नामक गॉव में बापी (कुऑ) खुदवायी। इस शिलालेख से यह भी जाना जाता है कि रूद्रभूति आभीर वैदिक धर्म को मानने वाला था। विक्रमी सम्वत् 305 के लगभग ईश्वरसेन आभीर महाराष्ट्र पर शासन करता था। नागार्जुनीकोडं गुण्टुर अभिलेख जो कि विक्रमी सम्वत् 335 का है। मालूम पड़ता है कि आभीरों का वहॉ भी राज्य था।

समुद्रगुप्त के समय आभीरों की शासन प्रणाली नागों, यौधेयों आदि की तरफ गणतन्त्रीय व्यवस्था में थी गुप्त सम्राट समुद्रगुप्त ने अन्य गणों के साथ 'आभीरों' को भी परास्त किया था। मालवार्जुनायन यौधेयमाद्रकाभीर प्रार्जुन................7वीं शताब्दी में आभीरों ने भीनमाल को लूटा था। विष्णुपुराण में आभीरों को गोपालक भी लिखा गया है। विद्वानों के एक दल ने आभीरों का अपभ्रंश अभिहर, आहीर माना है। आजकाल की 'अहीर' जाति प्राचीन आभीरों की सन्ताने है। उत्तर प्रदेशके 'झॉसी' और मध्यप्रदेश के 'भिलसा' के बीच का क्षेत्र अहीरों के नाम से 'अहीरवाड़ा' नाम पर जाना जाता है। राजस्थान हरियाणा, गुजरात कच्छ आदि प्रदेशों में इनकी काफी जनसंख्या है। हरियाणा प्रदेश में रेवाड़ी में इनका एक छोटा सा राज्य भी था। रेवाड़ी जंक्शन (रेल्वे लाइन–दिल्ली की) भी काफी मशहूर है। ''कच्छ के गौरवमय इतिहास में आभीर शासकों का योगदान अपना एक अलग ही महत्त्व रखता है। आभीरों के काफी शिलालेख कच्छ के नलिया, अबडासा, नखत्राणा, आदि

तहसीलों के कईयों गॉवों में यत्र–तत्र मिलते रहते हैं। भुज संग्रहालय के आइयामहेल में भी आभरों के काफी चीज बस्तुएँ एवं सिक्के सुरक्षित है। कच्छ की पावन–भूमि में इनका एक विशेष स्थान है।''

सहायक सूची

1.अन्धकारयुगीन भारतवर्ष का इतिहास ले. काशी प्रसाद जायसवाल, अनुवादकः रामचन्द्र वर्मा (सन् 150 ई. से 350 ई. तक). द्वितीय संस्करण सं. 2014 वि. नागरिप्रचारिणी सभा, काशी देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला–12।

2.वही, पृ. 169.

3.भा. अन्ध. इति. ले. काशीप्रसाद जायसवाल कृत, पृ 169.

4.वही, पृ. 285.

5.डॉ. बी.बी. मिराशी के अनुसार शूरवंश का एक नरेश दक्षिण कोसल में राज्य कर रहा था जो सोमवंशी पाण्डववंशी भी था। इन शूरवंश के नरेशों ने 'क्रमादित्य' उपनाम धारी सोने के सिक्के दक्षिण कोसल से जारी किये थे। राजा 'शूर' ने गुप्त सम्राट 'कुमारगुप्त प्रथम' की सहायता से गद्दी हॉसिल की थी। राजा 'शूर' ही सूर्यघेष है और सुर्यधोष पाण्डववंशी क्षत्रीय हैं। Ancient Hostory & Culture Of Dakshin Kosal By Dr. Vishnusingh Thakur. (Ph. D. Thisis) और बिस्तार के लिए देखिए डॉ. प्रो. चन्द्रिकासिंह सोमवंशी, रिसर्च स्कॉलर, का 'पी.एच्.डी' का शोध प्रबन्ध 'सोमवंशियों का इतिहास और उनके अभिलेख', भाग–1 और भाग–2, मान पब्लिकेशन ऐण्ड डिंस्ट्रिब्युटर्स, करतारपुर, जयपुर (राज.) – 302006. प्रथम संस्करण, सन् 2011 ई.

6.रायल रूशियाटिक सोसाइटी जरनलस पृ. 566.

7.अधिक बिस्तार के लिए देखिए डॉ. प्रो. चन्द्रिकासिंह सोमवंशी, रिसर्च स्कॉलर, की 'यू.जी.सी.' द्वारा स्पोन्सर 'माइनर रिसर्च प्रोजेक्ट, भाग–2' ''कच्छ बिस्तार का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अनुशीलन''।

8.Conis Of Andhra Dynasty By Dr. Raipson' Page 162 और वही पृ. 202, काशीप्रसाद जायसवाल।

9.Early Hostory Of India, By Dr. विसेंट स्मिथ कृत, पृ 226. पाद–टिप्पणी, जिसमें डॉ डी. आर. भण्डारकर का मत भी उद्धृत है।

10.Archeaological Survery of Indisa, Report [k–2, पृ. 14.

11.Royal Asiatic Society of Bengal का जनरल, सन् 1897 ई. पृ. 20 से।

12.प्राचीन भारत का इतिहास ले. डॉ. बी.डी. महाजन, पृ. 331

13.प्राच्य विद्या निबन्धावली ले. स्वर्मिय डॉ. वासुदेव विष्णु मिराशी कृत, पृ. 155–156, (Studiesin Indology Vol. IV का हिन्दी अनुवाद) प्रथम संस्करण 1964 ई. और हलदा–दानपत्र, इण्डियन ऐण्टिक्वेरी ख–12, पृ. 193 तथा आगे।

14.Journal of the Department of Letters, [k-10, पृ 24–25

15.पदमावती ले. शर्मा कृत देखिए।

16.Journal of Bihar Orissa Research Society, खण्ड–18, पृ. 213

17.देखिए डॉ. सोमवंशीजी का 'यू.जी.सी.' के अनुदान पर संशोधन की गयी रिपार्ट, क.वि.सा.ऐति.अनु.। ''पाण्डवों की सन्तान कहलाने वाले अजेय शक्ति से सुशोभित यौधेयों से टक्कर लेना कोई बच्चों का काम न था। वे दूसरी – तीसरी शताब्दी में अपती प्राकाष्टा (ऊॅचे शिखर) पर विद्यमान थे। जो कि कुषाणों के छक्के छुड़ा दिये थें।''

18.वही, काशीप्रसाद जायसवाल कृत, पृ. 276.

19.Journal of Royal Asiatic Society of Bengal, सन. 1897 ई. 30 से.

20.सर्वक्षत्राविष्कृत – वीरशब्दजातोत्सेक अविधेयानाम्। एपिग्राफिया इण्डिका, खण्ड–8, पृ. 88 अर्थात् ''यौधेय लोग बहुत ही कठिनता से अधीनता स्वीकार करते थे, समस्त क्षत्रियों में अपनी 'वीर' उपाधि सार्थक करने के कारण उन्हें गर्व था।'' (कीलहर्न के अनुदान के आधार पर)।

21.वाकाटक गुप्त युग, पृ. 83

22.भारतवर्ष का इतिहास, पृ. 79

23.प्राचीन भारत का इतिहास ले. डॉ. बी.डी. महाजन, पृ. 351.

24.प्राचीन भारतीय अमिलेख संग्रह ले. डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल के पुस्तक को बिस्तार से देखिए।

25.विल्सन द्वारा सम्पादित विष्णुपुराण (अंग्रेजी संस्कारण) खण्ड–2, पृ. 233, ''शूर आमीरा'' मिलाओं हरिवंश पुराण 12.8.37 का शूर आभीराः।

26.देखिए डॉ. विल्सन कृत, विष्णुपुराण, खण्ड–2 पृ. 133 में डॉ. हाल की लिखी हुई टिप्पणी देखिए।

27.हिन्दु राजतन्त्र, डॉ. काशीप्रसाद जायसवाल कृत, पहला भाग देखिए। पृ. 257.

28.भारतवर्ष का अन्धकारयुगीन इतिहास ले. डॉ. काशीप्रसाद जायसवाल कृत. पृ.279

29.महाभारत के अनुसार (बाटधन्य और माणिधन्य आपस में पडोसी थें) देखिए डॉ. विल्सन द्वारा सम्पादित, महाभारत, खण्ड–2, पृ. 167(वाटघान–पाटहानत्रपाठान)

30.Elpigraphia Indica, खण्ड –9, पृ. 269 ASWR (Asiatic Society of Bengal, Western Journal) खण्ड – 4, पृ. 125.

31.बंगाल एशियाटिक सोसायटी जनरल, सन. 1854, पृ. 234

32.वही, काशीप्रसाद जायसवाल कृत पृ. 284

33.Journal of Bihar & Orissa Research Society Patna (Bihar) खण्ड – 16. प1. 287 और वही खण्ड – 16, पृ. 125.

34.बिहार उड़ीसा रिसर्च सोसायटी जरनल, खण्ड–18, पृ. 201, प्रकाशित The Younas of the Puranas (पुराणों के यौन) शीर्षक लेख देखिए।
35.व्ही जायसवाल कृत, पृ. 285.
36.Eephigraphia India, खण्ड–8, पृ. 88.
37.भा. अन्ध. इति. ले. डॉ. काशीप्रसाद जायसवाल कृत, पृ. 809 से 899.
38.वाकाटक गुप्त युग, पृ. 39.
39.आर्कियोलोजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया रिपोर्ट, 1913–15, पृ. 222 से 245.
40.कैटलॉग् ऑफ दि इण्डियन क्वायन्स ऑफ दि आन्ध्र डायेनस्टी वेस्टर्न–ऐस्टर्न इण्डिया, (इस दि ब्रिटिश म्युजियक) ले. रैप्सन ई. जे. लन्दन, सन 1908, ई भूमिका से पृ. 123– 261 और अधिक विस्तार के लिए देखिए डॉ. प्रो. चन्द्रिकासिंह सोमवंशी, रिसर्च स्कॉलर, का 'यु.जी. सी.' प्रोजेक्ट प्रथम 'कच्छ का ऐतिहासिक एवं भौगोलिक अध्ययन' मान पब्लिकेशन ऐण्ड डिस्ट्रिब्युटर्स, करतारपुर, जयपुर, 2011 में प्रकाशित, प्रथम संस्करण और 'कच्छ विस्तार का एतिहासिक एवं सांस्कृतिक अनुशीलन' द्वितीय रिपोर्टस।
41.एपिग्राफिया इण्डिका, जिल्द 16, पृ. 232 यह तिथि डॉ.राखालदास बैनर्जी के मातानुसार है। लेकिन श्री नगीगोपाल मजुमदार उसे चालीस वर्ष और पीछे रखना पसन्द करते हैं ;जनरल of Asiatica of Bengal न्यू सीरिज, 19343द्ध
42.Journal of Bihar Orissa Research Society भाग – 18, पृष्ठ 212–213 और वही वाकाटक युग, पृ. 143.
43.Journal of Royal Asiatic Society सन् 1914, पृ. 24.
44.वाकाटक गुप्त युग, पृ. 14 और 315.
45.महाभरत सभा पर्व, 78 / 35 / 36 /
46.क्षत्रिय राजवंश (क्षत्रिय दर्शन) ले. रघुनाथसिंह शेखावत, सं. अचलसिंह भाटी, पृ. 37 प्र.सं. सन. 1998 ई.जोधपुर (राजस्थान)।
47.पृथ्वीराज रासो, ग्रन्थ, भाग–1, पृ. 50.
48.महाभारत शल्यपर्व, 38 / 911 और भारतवर्ष का बृहत् इतिहास पृ. 16.
49.महाभारत, मोसलपर्व।
50.प्राचीन भारतीय आभिलेख संग्रह सं. श्री रामगोपाल, पृ. 346–347.
51.भारतीय अमिलेख संग्रह, पृ. 9.
52.महाभारत, अक्टूबर 1982 ई. में श्री कृष्ण पाण्डेय का लेख 'जनपदीय युगीन राजस्थान', पृ. 48.
53.क्षत्रिय दर्शन, विशेषॉक, 1998 ई. पृ. 328.

// Publish Research Article
International Level Multidisciplinary Research Journal
For All Subjects

Dear Sir/Mam,

We invite unpublished Research Paper,Summary of Research Project,Theses,Books and Book Review for publication,you will be pleased to know that our journals are

Associated and Indexed,India

- International Scientific Journal Consortium
- OPEN J-GATE

Associated and Indexed,USA

- Google Scholar
- EBSCO
- DOAJ
- Index Copernicus
- Publication Index
- Academic Journal Database
- Contemporary Research Index
- Academic Paper Databse
- Digital Journals Database
- Current Index to Scholarly Journals
- Elite Scientific Journal Archive
- Directory Of Academic Resources
- Scholar Journal Index
- Recent Science Index
- Scientific Resources Database
- Directory Of Research Journal Indexing

Indian Streams Research Journal
258/34 Raviwar Peth Solapur-413005,Maharashtra
Contact-9595359435
E-Mail-ayisrj@yahoo.in/ayisrj2011@gmail.com
Website : www.isrj.org